मालव इतिहास : एक विहंगावलोकन

विद्यावारिधि डा० ज्योति प्रसाद जैन, लखनऊ

[हमारे अभिनन्दनीय गुरुदेव ज्योतिर्विद् श्रद्धेय श्री कस्तूर चन्दजी महाराज एवं प्रवर्तक श्री हीरालालजी महाराज की जन्मभूमि मालव प्रदेश रहा है। मालव, जैनधर्म-संस्कृति एवं इतिहास की क्रीड़ा-भूमि रही है। जैन संस्कृति के संरक्षण एवं सवर्धन में मालवभूमि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। अभिनन्दनीय पुरुषों की अभिनन्दन वेला में जन्म-भूमि के गौरव को स्मृतिपथ में लाना भी अनिवार्य है। इस दृष्टि से इस खण्ड में प्रस्तुत है—जन्मभूमि मालव की धार्मिक एवं सांस्कृतिक गरिमा का विरल शब्द-चित्र।] —सम्पादक

मध्य प्रदेश का जो भूभाग आज मालव या मालवभूमि नाम से जाना जाता है, वह वस्तुतः भारतवर्ष का नाभिस्थल है, और राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टियों से ही नहीं, सांस्कृतिक दृष्टि से भी इस महादेश का प्रमुख एक केन्द्र रहता आया है। अति प्राचीनकाल में यह भूभाग अवन्तिदेश के नाम से विख्यात था और अवन्तीपुरी अपरनाम उज्जयिनी (उज्जैन) उसकी राजधानी थी। जैनपुराण एवं कथा साहित्य में तथा आगमिक ग्रन्थों में अवन्तीदेश और उज्जयिनी नगरी के अनेक उल्लेख एवं सुन्दर वर्णन प्राप्त होते हैं।

शुद्ध इतिहासकाल में, महावीरकालीन (छठी शती ईसा पूर्व के) भारत के सोलह "महाजनपदों" में अवन्ति एक प्रमुख एवं शक्तिशाली महाजनपद था और उज्जयिनी की गणना उस काल की दश महाराजधानियों एवं सप्त महापुरियों में थी। यह एक राजतंत्र था, और उसका एकच्छत्र शासक अवन्तिपति महासेन चण्ड-प्रद्योत था, जो उग्र प्रकृति का, युद्धप्रिय, शूरवीर, प्रतापी एवं शक्तिशाली स्वेच्छाचारी नरेश था। परन्तु भगवान महावीर के तथा स्वयं अपनी महारानी सती शिवादेवी एवं वत्स देश की राजमाता सती मृगावती के प्रभाव से अन्ततः सौम्य हो गया था और धर्म की ओर भी उन्मुख हुआ था। शिवादेवी और मृगावती सगी बहनें थीं और वैशाली के लिच्छवि गणाधिप महाराज चेटक की पुत्रियाँ थीं, और इस प्रकार महावीर जननी त्रिशला प्रियकारिणी की बहनें (अथवा भतीजियाँ) थीं। प्रद्योत की पुत्री वासवदत्ता वत्सराज उदयन की लोक-कथा-प्रसिद्ध प्रेयसी थी। अपने तपस्याकाल में भी महावीर एकदा उज्जयिनी पधारे थे, और जब वह नगर के बाहर अतिमुक्तक श्मशान में प्रतिमायोग से ध्यानस्थ थे तो स्थाणुरुद्र ने उन पर नानाविध भयंकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपसर्ग किये थे। उक्त उपसर्गों का इन योगिराज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो महारुद्र ने उनकी स्तुति की, अपनी संगिनी उमा सहित भक्ति में उल्लसित हो नृत्य किया और भगवान को 'महति' एवं 'महावीर' नाम दिये।[1] केवलज्ञान प्राप्ति के उपरान्त भी भगवान का समवसरण उज्जयिनी में आया बताया जाता है। जिस दिन भगवान महावीर निर्वाण को प्राप्त हुए उसी दिन चंडप्रद्योत का भी निधन हुआ और उसका पुत्र पालक उज्जयिनी के सिंहासन पर आसीन हुआ। जैन परम्परा में उज्जयिनी का महत्त्व उसी काल में इतना बढ़ गया था कि प्राचीन जैन ग्रन्थों में महावीर-निर्वाणोपरान्त की जो राज्य कालगणना प्राप्त होती है, वह मुख्यतया इसी नगर को केन्द्र मानकर दी गई है।

मगध के नन्द सम्राट् महानंदिन ने, जो सर्वक्षत्रान्तक कहलाया, पालक के वंशजों का उच्छेद करके अवन्ति को मगध साम्राज्य में मिला लिया और उज्जयिनी को मगध साम्राज्य की उपराजधानी बनाया। चाणक्य एवं चन्द्रगुप्त मौर्य ने जब मगध से नन्दों की सत्ता को समाप्त कर दिया तो उन्होंने वृद्ध महापद्मनन्द को सुरक्षित अपने धन-जन सहित अन्यत्र चले जाने की अनुमति दे दी थी, और ऐसा लगता है कि उसने अपना अन्तिम समय उज्जयिनी में ही बिताया था। उसकी मृत्यु के पश्चात् चन्द्रगुप्त मौर्य ने इस नगरी को पुनः साम्राज्य की उपराजधानी बना लिया। राज्य का परित्याग करके मुनिरूप में अपने आम्नायगुरु भद्रबाहु श्रुतकेवली का अनुगमन करते हुए श्रवणबेलगोल (कर्णाटक) जाते समय भी यह राजर्षि चन्द्रगुप्त इस नगर से होकर गया था। एक अनुश्रुति के अनुसार तो श्रुतकेवली ने द्वादशवर्षीय दुष्काल की भविष्य वाणी उज्जयिनी में ही की थी। उसके पुत्र एवं उत्तराधिकारी बिन्दुसार अमित्रघात के शासनकाल में राजकुमार अशोक उज्जयिनी का वायसराय (राज्यपाल) रहा था। वहाँ रहते हुए ही उसने विदिशा की एक श्रेष्ठि-कन्या से विवाह किया था—उसी का पुत्रराजकुमार कुणाल था। अशोक के शासनकाल में कुणाल उज्जयिनी का राज्यपाल रहा, और अशोक की मृत्यु के उपरान्त जब कुणाल का पुत्र सम्प्रति मगध साम्राज्य के बहुभाग का उत्तराधिकारी हुआ तो उसने उज्जयिनी को ही अपनी राजधानी बनाया। सम्राट् सम्प्रति के गुरु आर्य सुहस्ति थे जिनकी प्रेरणा से उसने अनगिनत जिनमन्दिर बनवाये। अनेक धर्मोत्सव किये, तथा धर्म की प्रभावना, प्रचार एवं प्रसार के लिए नानाविध प्रयास किये, जिनके कारण उस धर्मप्राण नरेश की यशोगाथा इतिहास में अमर हो गई। उसका पुत्र शालिशुक्त भी धर्मात्मा एवं धर्म प्रभावक था।

सम्प्रति मौर्य के निधन के कुछ काल उपरान्त कलिंग चक्रवर्ती सम्राट् खारवेल ने अवन्ति देश पर अधिकार किया और अपने एक राजकुमार को यहाँ का राज्यपाल नियुक्त किया, जो लगता है कि खारवेल के निधन के उपरान्त स्वतंत्र हो गया। उसी का

---

१ उत्तरपुराण पर्व ७४, श्लो० ३३१-३३७ (गुणभद्र)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुत्र था पौत्र संभवतया महेन्द्रादित्य गर्दभिल्ल था, जिसका पुत्र उज्जयिनी का सुप्रसिद्ध वीर विक्रमादित्य (ई० पू० ५७) था।

मौर्यवंश की स्थापना के कुछ वर्ष पूर्व ही, ई० पू० ३२६ में यूनानी सम्राट् सिकन्दर महान ने भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेशों पर आक्रमण किया था। उस काल में उस प्रदेश में कई छोटे-छोटे राजतन्त्र और दर्जनों गणतन्त्र स्थापित थे। इन्हीं गण-राज्यों में एक "मल्लोइ" (मालव) गण था। ये मालव जन बड़े स्वाभिमानी, स्वतन्त्र-चेता और युद्धजीवी थे। यूनानियों की अधीनता में रहना इन्हें नहीं रुचा, अतएव सामूहिक रूप से स्वदेश का परित्याग करके वे वर्तमान राजस्थान में पलायन कर गये। वहाँ टोंक जिले में उनियारा के निकट अब भी प्राचीन मालव नगर के अवशेष हैं। कालान्तर में वहाँ से भी निर्गमन करके वे अन्ततः उज्जयिनी क्षेत्र में बस गये। यह घटना सम्प्रति मौर्य के समय घटी प्रतीत होती है। खारवेल की विजय के समय अवन्ति में इन्हीं युद्धवीर मालवजनों की प्रधानता हो गई लगती है, अतएव उसका जो राजकुमार राज्य प्रतिनिधि के रूप में रहा वह मालवगण के प्रमुख के रूप में होगा। गर्दभिल्ल के दुराचारों से त्रस्त होकर आचार्य कालक सूरि ने शककुल के शक-शाहियों की सहायता से उस अत्याचारी शासक का उच्छेद किया। किन्तु अब स्वयं शक लोग यहाँ जम गये और विजय के उपलक्ष्य में एक संवत् भी ई० पू० ६६ में चला दिया। स्वतन्त्रता प्रेमी मालवगण यह सहन न कर सके और गर्दभिल्ल-पुत्र वीर विक्रमादित्य के नेतृत्व में संगठित होकर उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम छेड़ दिया। परिणामस्वरूप, ई० पू० ५७ में वे उज्जयिनी से शकों का पूर्णतया उच्छेद करने में सफल हुए, विक्रमादित्य को गणाधीश नियुक्त किया, सम्वत् प्रचलित किया जो प्रारम्भ में कृत, (कार्तिकादि होने के कारण) तथा मालव सम्वत् कहलाया और कालान्तर में विक्रम सम्वत् के नाम से लोक प्रसिद्ध हुआ तथा सिक्के भी चलाये जिन पर "मालव-गणानां जय" जैसे शब्द अंकित हैं। तभी से यह प्रदेश मालवभूमि या मालवा नाम से प्रसिद्ध होता गया। विक्रमादित्य के आदर्श सुराज्य में उसकी महती अभिवृद्धि हुई। विक्रमादित्य की एक आदर्श जैन नरेश के रूप में प्रसिद्धि हुई है।

कुछ काल तक मालवा पर विक्रमादित्य के वंशजों का राज्य रहा, जिसके उपरान्त सौराष्ट्र के शक क्षहरात नहपान एवं उसके उत्तराधिकारी चष्टनवंशी शक क्षत्रपों और प्रतिष्ठान के शातवाहन नरेशों के मध्य उज्जयिनी पर अधिकार करने की होड़ चली। भद्रचष्टन ने उस पर अधिकार करके प्रचलित शक संवत् (७८ ई०) चलाया तो कुछ समय पश्चात् शातवाहनों ने अधिकार करके उक्त संवत् के साथ "शालिवाहन" विशेषण जोड़ दिया। ईसा की तीसरी-चौथी शती में इस प्रदेश पर वाकाटकों का शासन रहा। तदनन्तर गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त ने उज्जयिनी को अपने साम्राज्य की उपराजधानी बनाया। उसकी सभा में कालिदास, सिद्धसेन, क्षपणक प्रभृति नवरत्नों ने इस नगरी को ज्ञान-विज्ञान एवं संस्कृति का उत्तम केन्द्र बना दिया। वराहमिहिर जैसे ज्योतिषाचार्य भी यहीं हुए। गुप्त साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने पर भी छठी शती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में गुप्तों की एक शाखा मालवा में शासन करती रही जिसमें हूण नरेश तोरमाण को प्रबोधने वाले आचार्य हरिगुप्त और राजर्षि देवगुप्त जैसे जैन सन्त हुए। इसी बीच मन्दसौर का वीर यशोधर्मन भी कुछ काल के लिए अप्रतिम प्रकाश पुंज की भांति चमक कर अस्त हुआ। सातवीं शती में मालवा कन्नौज के हर्षवर्धन के साम्राज्य का अंग हुआ, जिसके उपरान्त भिन्नामाल के गुर्जर प्रतिहार नरेशों का यहाँ अधिकार हुआ।

ऐसा लगता है कि ८वीं शती ई० के मध्य के लगभग धारानगरी को राजधानी बनाकर मालवा में परमारों ने अपना राज्य स्थापित किया। कहा जाता है कि उपेन्द्र नामक वीर राजपूत इस वंश का संस्थापक था। आचार्य जिनसेन पुन्नाट ने अपनी हरिवंश पुराण की रचना ७८३ ई० धारा से नातिदूर वर्धमानपुर (बदनावर) में की थी। और उस समय के 'अवन्ति-भूभृति' का उन्होंने उल्लेख किया है, जो उपेन्द्र या उसका उत्तराधिकारी हो सकता है। प्रारम्भ में परमार राजा गुर्जर प्रतिहारों के सामन्तों के रूप में बढ़े लगते हैं। दसवीं-ग्यारहवीं शती में सिन्धुल वाम्पतिमुंज, भोज, जयसिंहदेव जैसे प्रायः स्वतन्त्र, प्रतापी विद्यारसिक एवं कवि हृदय नरेश रत्न इस वंश में हुए, जिनके समय में महसेन, धनिक, धनपाल, माणिक्यनंदी, नयनंदि, अमितगतिसूरि, महापण्डित प्रभाचन्द्र, श्रीचन्द्र, प्रभृति अनेक दिग्गज जैन साहित्यकारों ने भारती के भण्डार को भरा। भोज का शारदासदन तो दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गया। साहित्य एवं कला साधना की यह परम्परा परमार नरेशों के प्रश्रय में १३वीं शती पर्यन्त चलती रही। आचार्यकल्प पं० आशाधर एवं उनका साहित्यमण्डल उक्त शती के पूर्वार्ध में विद्यमान था।

तेरहवीं शती के अन्त के लगभग दिल्ली के सुल्तानों का मालवा पर अधिकार हुआ और चौदहवीं के अन्त के लगभग मालवा के स्वतन्त्र सुल्तानों की सत्ता मण्डपदुर्ग (माण्डू) में स्थापित हो गई, जिसके अंतिम नरेश बाज बहादुर को समाप्त करके १५६४ ई० में अकबर महान् ने मालवा को मुगल साम्राज्य का एक सूबा बना दिया। उपरोक्त मालवा के सुल्तानों के समय में भी अनेक जैनधर्मानुयायी राज्यकार्य में नियुक्त रहे, मण्डन मन्त्री जैसे महान साहित्यकार हुए, जैन भट्टारकों की गद्दियाँ भी मालवा में स्थापित हुईं और मन्दिर-मूर्तियाँ भी अनेक प्रतिष्ठित हुईं। मुगल शासनकाल में स्थिति में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ।

मुगलों के पराभव के उपरान्त मालवा पर मराठों का अधिकार हुआ और उत्तर मराठा युग में इन्दौर, ग्वालियर आदि कई मराठाराज्य स्थापित हुए, कुछ राजपूत राज्य भी थे, जो सब अंग्रेजी शासनकाल में सीमित अधिकारों के साथ बने रहे। १९४७ ई० में स्वतन्त्रता प्राप्ति के फलस्वरूप मालवा सर्वतन्त्र स्वतन्त्र भारत के मध्य प्रदेश राज्य का अंग बना।

इसमें सन्देह नहीं है कि मालवभूमि प्रारम्भ से ही वर्तमान पर्यन्त, भारतीय संस्कृति का ही नहीं जैनधर्म एवं जैन संस्कृति का भी एक उत्तम गढ़ रहता आया है। जैन आचार्यों, सन्तों, कलाकारों, श्रीमन्तों एवं जनसाधारण ने इस भूमि की संस्कृति एवं समृद्धि के संरक्षण और अभिवृद्धि में प्रभूत योग दिया है।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org